अतिक्रमण या सेवा ?

गीतम तिवारी

सड़क पर माल बेचने वालों को अक्सर सड़क पर गैरकानूनी कब्ज़ा जमाने वालों के रूप में ही देखा जाता है। ट्राफिक व यातायात नियोजक भी आम तौर पर इन्हें पैदल व मोटरचालित वाहनों के सड़कों पर मुक्त संचार की राह में अनावश्यक बाधा मानते हैं। इसलिए आए दिन इन्हें सड़कों से हटाने अथवा कहीं और ले जाने की मुहिम छेड़ी जाती है। ऐसे निर्णय वही अधिकारी लेते हैं जो इन विक्रेताओं की सेवाओं का उपभोग नहीं करते। वैसे तो निर्णय लेने की प्रक्रिया में जन भागीदारी की बात हम ढोल पीटकर करते हैं (जो आजकल एक फैशन भी बन गया है) किन्तु इससे प्रभावित लोगों को इस प्रक्रिया से दूर ही रखा जाता है।

यहां हम चर्चा करेंगे कि हमारे विविधतापूर्ण सामाजिक ढांचे में सड़क पर माल बेचने वालों की सेवाएं किस प्रकार अपरिहार्य हैं। एक बार हम इस तथ्य को स्वीकार कर लें कि समाज के लिए ये सेवाएं आवश्यक हैं, तो सड़कों के विकास की योजना बनाते समय इनके लिए स्थान निश्चित करने की बात सम्भव हो सकती है। ऐसी योजनाओं से यह सुनिश्चित हो सकेगा कि ये कर्मठ विक्रेता भी अपना धंधा सुचारू रूप से कर सकें और पैदल चलने वालों को भी आवागमन में असुविधा न हो।

सबसे पहले हम शहरों पर पड़ रहे जनसंख्या के दबाव की ओर ध्यान देते हैं। हमारी कुल आबादी का केवल 25.72 प्रतिशत हिस्सा शहरों में रहता है। इस दृष्टि से भारत को शहरीकृत देश की श्रेणी में नहीं रख सकते। किन्तु भारत की कुल शहरी आबादी और इसके विकास में आ रही समस्याओं को देखते हुए इसे अति शहरीकृत दर्जा दिया जा सकता है। 1901 से '91 के बीच शहरी आबादी नौ गुना बढ़ी है किन्तु शहरों की संख्या केवल दुगुनी ही हुई है। प्रथम श्रेणी के शहरों की आबादी में 26 से 65 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है। इससे प्रतीत होता है कि जनसंख्या का पलायन बड़े शहरों में ही अधिक हुआ है। शहरी आबादी का 51 प्रतिशत भाग केवल प्रथम श्रेणी के 23 शहरों में बसता है। इन सभी शहरों की आबादी दस लाख से ज़्यादा है। द्वितीय व तृतीय श्रेणी के शहरों की जनसंख्या में कोई बढ़ोत्तरी नहीं हुई है। जबकि चौथी, पांचवीं व छठी श्रेणी के शहरों की जनसंख्या में गिरावट आई है। यानी बड़े शहरों की ओर पलायन केवल गांवों से ही नहीं बल्कि छोटे शहरों से भी हो रहा है। ऐसा आर्थिक गतिविधियों के असमान वितरण व मुख्यतः बड़े शहरों के इर्दगिर्द केन्द्रीकृत होने से हुआ है।

बड़े शहरों का विस्तार जनसंख्या के साथ-साथ स्थान की दृष्टि से भी हुआ है। ये शहर अपनी सीमाएं पार कर चुके हैं। कई शहरों में एक से अधिक नगर परिषदें हैं। पिछले दो दशकों में देश के चार प्रमुख महानगरों का विस्तार अभूतपूर्व रहा है। इन शहरों का पुराना हिस्सा बहुत ही घना बसा है। वहां पुराने मकान व संकरी गलियां हैं तथा ज़मीन का उपयोग सुनियोजित नहीं है। फिर इन शहरों का अनियोजित व अवैध विस्तार है (मुख्यतः शहरों को जोड़ने वाले प्रमुख महामार्गों के दोनों ओर और राजमार्गों के आसपास) जो नगरपालिका की सीमाएं लांघ गया है। इन शहरों की विस्तारित बस्तियों में दो प्रकार

1901 से '91 के बीच शहरी आबादी नौ गुना बढ़ी है किन्तु शहरों की संख्या केवल दुगुनी ही हुई है। प्रथम श्रेणी के शहरों की आबादी में 26 से 65 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है। इससे प्रतीत होता है कि जनसंख्या का पलायन बड़े शहरों में ही अधिक हुआ है। शहरी आबादी का 51 प्रतिशत भाग केवल प्रथम श्रेणी के 23 शहरों में बसता है। इन सभी शहरों की आबादी दस लाख से ज़्यादा है। द्वितीय व तृतीय श्रेणी के शहरों की जनसंख्या में कोई बढ़ोत्तरी नहीं हुई है। जबकि चौथी, पांचवीं व छठी श्रेणी के शहरों की जनसंख्या में गिरावट आई है। यानी बड़े शहरों की ओर पलायन केवल गांवों से ही नहीं बल्कि छोटे शहरों से भी हो रहा है।

के लोग रहते हैं। एक तो ज़मीन खरीदने में असमर्थ निम्न व मध्यम वर्ग के लोग और दूसरे पूरे शहर में बिखरे व अवैध रूप से मकान बनाकर रह रहे गरीब लोग। इनमें से अधिकांश निर्माण कार्य में लगे श्रमिक या छोटे-मोटे काम करने वाले मज़दूर हैं। जितना बड़ा शहर होगा वहां उतनी ही अधिक अवैध बस्तियां होंगी। बड़े शहरों में तो 40-50 प्रतिशत जनसंख्या इन्हीं बस्तियों में रहने वाले लोगों की है।

इसके अलावा शहरों के कुछ भागों में सुनियोजित कॉलोनियां और व्यापारिक केन्द्र भी हैं जिन्हें निजी या सहकारी क्षेत्र ने सभी सुविधाओं के साथ विकसित किया है। इनमें उच्च आय वर्ग के मकान अथवा बहुमंज़िला इमारतें हैं। इन्हें शहर से सम्पर्क हेतु यातायात के सार्वजनिक अथवा निजी वाहन उपलब्ध हैं। शहरों की बाहरी सीमाओं पर बनी बस्तियां शहरी व ग्रामीण दोनों परिवेश समेटे हुए हैं। इन्हीं बस्तियों के कारण यातायात के विविध साधनों की मांग बढ़ी तथा भारतीय शहरों में यातायात प्रणाली का उदय हुआ। इन बाहरी क्षेत्रों में सड़कों पर साइकिल चालकों, पैदल चलने वालों तथा सड़क पर माल बेचने वालों के लिए स्थान सुनिश्चित कर देने के बाद मोटर चालित वाहनों के लिए पर्याप्त स्थान उपलब्ध है।

अधिकांश मेट्रो शहरों के विकास के मास्टर प्लान 1960 के दशक में बनाए गए हैं। ये मास्टर प्लान निम्न बातों के अनुसार बनाए गए थे : अ) **जनांकिकीय** पूर्वानुमान और उस स्तर का निर्णय जिस पर जनसंख्या को नियंत्रित रखना है। ब) मौजूदा घनत्व का स्तर और भावी इन्फ्रास्ट्रक्चर की क्षमता के हिसाब से जनसंख्या का विभिन्न इलाकों में **नियतन**। स) बड़े पैमाने पर ज़मीन का अधिग्रहण ताकि नियोजित विकास सुनिश्चित किया जा सके।

मास्टर प्लान को तैयार करने के लिए अपनाई गई नियोजन रूपरेखा संसाधनों के आकलन से पूरी तरह से कटी हुई है। इसी प्रकार विवादित विषयों पर आम सहमति बनाने और लोगों को शामिल करने के प्रयास भी नहीं किए गए हैं। नियोजन की त्रुटियों के कारण शहरों का विकास योजना के अनुसार कतई नहीं हुआ। नए बसे शहरी क्षेत्रों में अनाधिकृत रिहायशी बस्तियों व व्यापारिक परिसरों का निर्माण धड़ल्ले से हुआ है। मेट्रो शहरों में जहां 50 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या और कई लघु उद्योग ऐसी ही अवैध बस्तियों में हो रहे हैं, हमारे शहरी नियोजक, नियोजन के वही दकियानूसी तरीके अपना रहे हैं। उनकी भूमिका मात्र शहरी अल्पसंख्यक धनी वर्ग को सुविधा पहुंचाने तक सीमित होती है। गंदी बस्तियों के विकास की दिशा में कुछ प्रयास किए गए हैं किन्तु वे ऊंट के मुंह में जीरा ही साबित हुए हैं।

अधिकांश बड़े शहरों में अनियंत्रित विस्तार व यातायात के अवरोध जैसी समस्याओं पर काबू पाने के लिए किताबी उपाय अपनाए गए हैं। उच्च घनत्व वाले नियोजित फैलाव और परिवहन की भावी मांगों को ध्यान में रखकर बनी नीतियों के समर्थन में बड़े पैमाने पर ज़मीन के एकीकृत इस्तेमाल वाले परिवहन मॉडलों का उपयोग किया गया। बावजूद इसके अनाधिकृत बस्तियों के विस्तार तथा फुटपाथ पर निवास जैसी समस्याएं जस की तस बनी हुई हैं। मेट्रो शहरों की 40 से 65 प्रतिशत आबादी इन्हीं अनधिकृत बस्तियों व फुटपाथ पर निवास

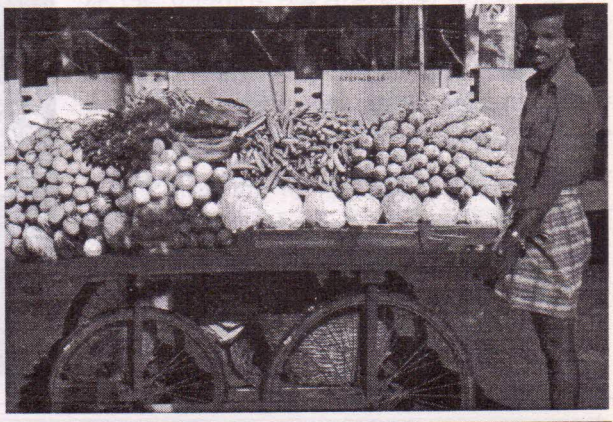

लेकिन अगर हम मोटरीकृत ट्राफिक (खास तौर पर निजी कारों) के लिए सड़क का ड़िज़ाइन तैयार करने के लिए अपनाए गए सिद्धान्त को यहां भी लागू करें तो इन विक्रेताओं का सड़क पर उचित व वैधानिक हक बनता है। राजमार्गों में मोटरीकृत ट्राफिक के लिए थोड़ी-थोड़ी दूरी पर सर्विस स्टेशनों की अनुशंसा की गई है। जिस तरह इन वाहनों के लिए सड़क के किनारे सर्विस स्टेशनों की आवश्यकता होती है, उसी तरह पैदल चलने वालों, साइकिल सवारों व बस में आने जाने वालों के लिए इन विक्रेताओं की ज़रूरत होती है। इन्हें भी जूते-चप्पलों, साइकिल आदि की मरम्मत करने वालों तथा पानी व खाद्य सामग्री विक्रेताओं की आवश्यकता होती है। थोड़ी-थोड़ी दूर पर ये सेवाएं न हों तो चलना मुश्किल हो जाएगा।

करने को बाध्य है जहां पीने का साफ पानी, गन्दे पानी की निकासी तथा बिजली जैसी मूलभूत सुविधाओं का अभाव है। चूंकि ये झुग्गी झोपड़ियां सभी शहरों में समान रूप से फैली हैं इसीलिए शहरी नियोजन के वक्त इन लोगों की आवश्यकताओं की ओर ध्यान देना अनिवार्य हो गया है।

गांवों व छोटे नगरों से आए मजदूरों ने उन स्थानों में बस्तियां बना ली हैं जो रिहायशी उपयोग के लिए नियोजित नहीं थीं। शहरी उद्योगों में कम वेतन पा रहे कामगारों के रहने के लिए मास्टर प्लान में कोई जगह सोची नहीं गई है। अनेक शहरी फैक्ट्रियां व लघु उद्योग कानून के दायरे से बाहर हैं। इनमें कार्यरत मज़दूरों को शासन द्वारा निर्धारित न्यूनतम वेतन भी नहीं दिया जाता। शासन द्वारा निर्धारित न्यूनतम वेतन में आवास व्यवस्था पर आने वाले खर्च की ओर ध्यान नहीं दिया गया है। नतीजतन जनसंख्या के एक बड़े भाग को निम्न श्रेणी के आवासों में रहने को बाध्य होना पड़ रहा है।

शहरों में यातायात के बढ़ते खर्च और कार्य के लम्बे घण्टों के कारण काम के स्थान के पास रहना मज़दूरों की बाध्यता बन गई है। अतः इन्हें अनधिकृत भूमि पर निवास करने को बाध्य होना पड़ता है। इन बस्तियों में रहने वाले कई लोग शहर के बाहरी क्षेत्रों में रहने वाली जनसंख्या को अनेक सेवाएं प्रदान करते हैं। इसलिए इन्हें लम्बी दूरी तय करनी पड़ती है। यही कारण है कि हमारे शहरों की बाहरी सीमावर्ती सड़कों पर मोटरचालित वाहनों के अलावा साइकिलें, पैदल यात्री व अन्य धीमी गति के साधन पर्याप्त संख्या में होते हैं जबकि इन सड़कों को द्रुत गति के वाहनों हेतु डिज़ाइन किया गया है।

भारतीय शहरों का ट्राफिक यहां के सामाजिक-आर्थिक स्तर और ज़मीन के इस्तेमाल के पैटर्न में व्याप्त विषमताओं का प्रतिबिम्ब है। इस ट्राफिक में शहर के आकार के हिसाब से पैदल चलने वाले, साइकिलें, रिक्शा, मोटर वाहन, सार्वजनिक वाहन आदि शामिल होते हैं।

आम तौर पर शहर के बढ़ने से जनसंख्या और दूरी बढ़ती है इससे पैदल आना-जाना कम हो जाता है।1 5-20 लाख की जनसंख्या वाले शहरों में सार्वजनिक परिवहन की भूमिका सीमित होती है। यातायात के विभिन्न साधनों की संख्या शहर के विस्तार और जनसंख्या पर निर्भर करती है। शहरों के यातायात की 25 प्रतिशत ज़रूरतें मोटरचालित दुपहिए वाहन पूरी करते हैं। हालांकि शहर के बढ़ते आकार के साथ साइकिलों का इस्तेमाल कम हो जाता है लेकिन दिल्ली जैसे महानगर तक में साइकिलों की संख्या बढ़ी है। अतः इनकी संख्या सबसे अधिक रहती है। शहरों में सार्वजनिक यातायात व्यवस्था अपर्याप्त होने के कारण लोगों को अन्य साधनों का उपयोग करने पर बाध्य होना पड़ता है। मुंबई में अधिकांश लोग यातायात के लिए उपनगरीय रेल सेवा

पर निर्भर हैं। अन्य शहरों में उन्हें बस सेवा पर निर्भर रहना पड़ता है। विभिन्न प्रकार के साधन हमारे समाज में उपस्थित विभिन्न वर्गों की ओर इशारा करते हैं।

हमारे शहरों की सड़कों पर कुल सात प्रकार के मानव व मोटर चालित वाहन चलते हैं। इनकी चौड़ाई 0.60 मीटर से 2.6 मीटर तक व गति 15 कि.मी. से 100 कि.मी. प्रति घण्टे के बीच होती है। अलग-अलग गतिशीलता और गतिहीन विशेषताओं वाले ये तमाम वाहन एक ही सड़क पर चलते हैं। ऐसे में एक औपचारिक प्रशिक्षण प्राप्त नियोजनकर्ता के लिए पूरी स्थिति गड्डमड्ड होने लगती है।

बड़े शहरों के सीमान्त क्षेत्रों में अधिकांशत: निम्न आय वर्ग के लोग रहते हैं। रोज़गार व अन्य ज़रूरतों के लिए वे शहरों के अन्दरूनी भाग में आते रहते हैं। इसीलिए शहरों की बाहरी सीमाओं की सड़कों पर मानव चालित वाहन बड़ी संख्या में देखने को मिलते हैं। सड़कों पर माल बेचने वाले प्राय: पैदल चलने वालों, साइकिल सवारों व बस से यात्रा करने वाले लोगों की ज़रूरतों को पूरा करते हैं तथा उन्हें सेवाएं प्रदान करते हैं। सड़कों के किनारों पर अथवा फुटपाथ पर ये प्राय: लोगों को खाद्य सामग्री, पेय पदार्थ व अन्य सेवाएं उपलब्ध कराते हैं। ये विक्रेता 'मुक्त बाज़ार' की स्थिति में अपना व्यवसाय करते हैं। यानी ये उन्हीं स्थानों पर पाए जाते हैं जहां इनकी सेवाओं की ज़रूरत होगी अथवा जहां इनका धंधा चलेगा। इससे इनकी अनिवार्यता परिलक्षित होती है। भले ही अधिकारी वर्ग इन्हें अवैध अथवा अनावश्यक समझें। अक्सर कहा जाता है कि इन विक्रेताओं के कारण सड़क पर चलने फिरने की जगह कम हो जाती है। लेकिन अगर हम मोटरीकृत ट्राफिक (खास तौर पर निजी कारों) के लिए सड़क का ड़िज़ाइन तैयार करने के लिए अपनाए गए सिद्धान्त को यहां भी लागू करें तो इन विक्रेताओं का सड़क पर उचित व वैधानिक हक बनता है। राजमार्गों में मोटरीकृत ट्राफिक के लिए थोड़ी-थोड़ी दूरी पर सर्विस स्टेशनों की अनुशंसा की गई है। जिस तरह इन वाहनों के लिए सड़क के किनारे सर्विस स्टेशनों की आवश्यकता होती है, उसी तरह पैदल चलने वालों, साइकिल सवारों व बस में आने जाने वालों के लिए इन विक्रताओं की ज़रूरत होती है। इन्हें भी जूते-चप्पलों, साइकिल आदि की मरम्मत करने वालों तथा पानी व खाद्य सामग्री विक्रेताओं की आवश्यकता होती है। थोड़ी-थोड़ी दूर पर ये सेवाएं न हों तो चलना मुश्किल हो जाएगा। खास तौर पर गर्मियों में। अत: जब तक लोग सड़कों का उपयोग करेंगे विक्रेता सड़कों के किनारे मौजूद रहेंगे ही। इन विक्रेताओं के विरुद्ध एक तर्क यह भी दिया जाता है कि ज़रूरत को देखते हुए अगर कुछ विक्रेताओं को सड़क किनारे धंधा करने की अनुमति दे दी जाती है तो इनकी संख्या धीरे-धीरे बढ़ती जाएगी। किन्तु एक परीक्षण के दौरान यह पाया गया कि इन विक्रेताओं की संख्या पैदल चलने वाले, साइकिल सवार व बस में प्रवास करने वाले यात्रियों की संख्या पर निर्भर करती है।

सुचारु रूप से काम कर रहे एक सड़क इन्फ्रास्ट्रक्चर के लिए ज़रूरी है कि वह सभी सड़क उपभोक्ताओं की ज़रूरतों को पूरा करे। पैदल चलने वाले, साइकिल व रिक्शा भारतीय ट्राफिक के अभिन्न अंग हैं। इन्हें सड़क किनारे व्यवसाय करने वालों द्वारा प्रदत्त सेवाओं की आवश्यकता होती है। अगर डिज़ाइन बनाते समय इन ज़रूरतों का ध्यान न रखा गया तो परिवहन के सभी माध्यम अपने श्रेष्ठ तरीके से काम नहीं कर पाएंगे। एक दक्ष और सुरक्षित ट्राफिक तंत्र को दो सिद्धान्तों पर अमल करना चाहिए।

(1) ऐसे मुख्य मार्ग जिनके दोनों ओर तीस मीटर से ज़्यादा जगह छोड़ी गई है उनमें साइकिल/गैर मोटरीकृत वाहनों के लिए अलग से निशान होने चाहिए। तथा इन पर मोटरीकृत वाहनों की सख्त मनाही होनी चाहिए।

(2) तीस मीटर से कम छोड़ी गई जगह वाली सड़कों पर मोटर गाड़ियों की औसत गति 20 से 30 किलोमीटर

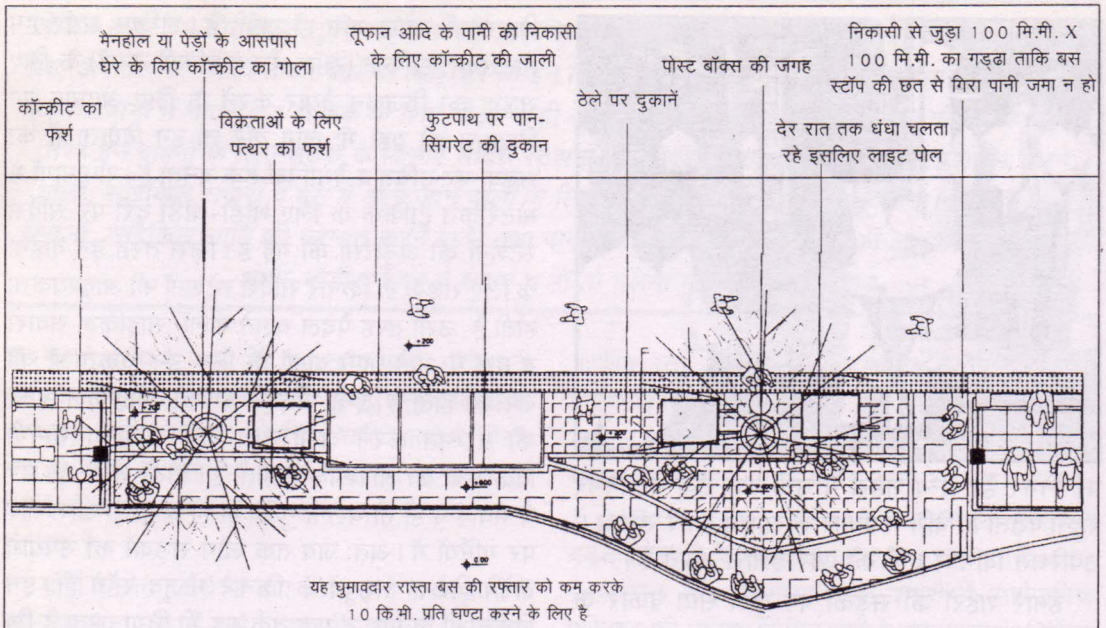

विक्रेताओं के लिए जगह बनाने के हिसाब से प्रस्तावित योजना

प्रति घण्टे के बीच होनी चाहिए।

एक सर्वे से चला है कि दिल्ली के मुख्य मार्गों पर उपरोक्त बातों को सुनिश्चित करने के साथ-साथ विक्रेताओं के लिए भी पर्याप्त जगह है। निम्न बिन्दुओं का ध्यान में रखकर हमने एक वैकल्पिक सड़क नियोजन का प्लान बनाया।

ऐसी सड़कें जिनमें पैदल चलने वालों के लिए 30 मीटर से ज़्यादा जगह छोड़ी गई है वहां साइकिल चलाने की अलग जगह की निशानदेही।

- तेज़ वाहनों के लिए मुख्य भाग पर कम से कम 3 मीटर चौड़ा रास्ता।
- बसों के लिए कम से कम 3.3 मीटर चौड़ा रास्ता
- साइकिलों हेतु कम से कम 2.5 मीटर चौड़ा रास्ता सेवा प्रदेताओं हेतु अलग रास्ता व फुटपाथ।

विभिन्न सेवाओं के लिए जो जगह दी जाएगी उसमें मानव चालित वाहनों हेतु पार्किंग, साइकिल रिपेयरिंग, मोची की दुकान तथा अन्य विक्रेताओं हेंतु अलग-अलग स्थान होगा। (देखें चित्र)

इन सुविधाओं को बस स्टाप के साथ जोड़ा जा सकता है। बस स्टॉप को चौराहों के पास ही रखना चाहिए ताकि बस यात्रियों को सड़क पार करने में असुविधा न हो। विक्रेताओं को बस स्टॉप के पास ही जगह देने से सड़क पर पैदल चलने वालों व साइकिल वालों को चलने में बाधा नहीं आएगी।

सड़क पर माल बेचने वाले विक्रेताओं का हमारे सामाजिक जीवन पर पड़ रहे प्रभाव के सकारात्मक पहलू की तरफ नीति निर्धारक कभी ध्यान नहीं देते। ये लोग सड़क के किनारे व्यवसाय करके ईमानदारी से अपनी जीविका चलाते हैं। इससे रोज़गार का एक और विकल्प उपलब्ध होता है। इन गरीब लोगों को अपनी व्यावसायिक क्षमता प्रदर्शित करने का अवसर मिलता है। सड़क के किनारे इनकी उपस्थिति से सड़कों पर अपराधों की संख्या में कमी आती है तथा महिलाओं, बच्चों व वृद्ध व्यक्तियों के लिए सड़कों का उपयोग सुरक्षित हो जाता है। जिन शहरों की सड़कों पर इन विक्रेताओं की संख्या अधिक होती है वे अधिक सुरक्षित होती हैं। *(स्रोत फीचर्स)*

गीतम तिवारी भारतीय तकनीकी संस्थान (आई.आई.टी.) दिल्ली के यातायात शोध एवं आघात रोकथाम कार्यक्रम में कार्यरत हैं।
अनुवाद : हार्डीकर